ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-6* Issue-8* November-2021
Anthology : The Research

भारतीय संस्कृति व लोककलाओं का संरक्षण एवं संवर्धनः एक आवश्यकता

Preservation and Promotion of Indian Culture and Folk Art: A Necessity

Paper Submission: 15/11/2021, Date of Acceptance: 23/11/2021, Date of Publication: 24/11/2021

दीपिका श्रीवास्तव
सहायक प्रवक्ता
समाजशास्त्र विभाग
दयानन्द गर्ल्स पी0जी0
कालेज, सिविल लाइन्स,
कानपुर, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश

संस्कृति अपने आप में बहुत ही व्यापक शब्द है जो जीवन की विविध प्रवृत्तियों से सम्बन्धित है। अतः विविध अर्थों में व भावों में उसका प्रयोग होता है। संस्कृति बिल्कुल ब्रह्म की भाँति अवर्णनीय है। कह सकते हैं कि मानव की अन्तर्मुखी प्रवृत्तियों से जो कुछ बना है। उसे संस्कृति कहते हैं। लोक संस्कृति व परम्परायें वह संस्कृतियाँ हैं जो अनुभव, श्रुतियों व विरासत के द्वारा चलायमान रहती हैं। इनका आधार किताबें व पोथियाँ नहीं होती हैं। भारतीय समाज को यदि समग्रता से देखा जाये तो समृद्धि, मौखिक, परम्पराओं, साम्प्रदायिक सौहार्द को यहाँ एक सूत्र में समाहित किया जाता है। गहरी अन्तर्दृष्टि के साथ देखा जाये तो लोकसंस्कृतियाँ और परम्परायें ग्रामीण भारत में पूर्णतया विराजमान हैं। कहा जा सकता है कि भारतीय समाज की संस्कृति बहुआयामी है। क्योंकि भारत कई धार्मिक प्रणालियों जैसे कि सनातन धर्म, जैन धर्म, बौद्ध धर्म और सिक्ख धर्म, सिन्धी धर्म इन सभी धर्मों का जनक है।इस मिश्रण से भारत में उत्पन्न हुए विभिन्न धर्म और परम्पराओं ने विश्व के सभी हिस्सों को प्रभावित किया है। यह एक साझा संस्कृति व साझा दृष्टिकोण को दर्शाता है। यही साझा दृष्टिकोण मूल्य, प्रथायें, परम्परायें भारतीय समाज के निश्चित लक्ष्य को दिखाता है। भारतीय समाज की सभी आर्थिक, सामाजिक एवं अन्य गतिविधियों में संस्कृति एवं रचनात्मकता का समावेश होता है। विविधताओं का देश भारत अपनी विभिन्न संस्कृतियों के लिए जाना जाता है। यहाँ गीत-संगीत, नृत्य, नाटक-कला, लोक-परम्पराओं, कला-प्रदर्शन, धार्मिक संस्कारों एवं अनुष्ठानों, चित्रकारी एवं लेखन के क्षेत्रों में एक बहुत बड़ा संग्रह मौजूद है जो मानवता की 'अमूर्त सांस्कृतिक विरासत' के रूप में जाना जाता है जिसका संरक्षण एवं संवर्द्धन एक महती आवश्यकता है।

Culture itself is a very broad term which is related to various trends of life. Hence it is used in different senses and expressions. Culture is indescribable just like Brahman. It can be said that whatever is made of the introverted tendencies of human beings. It is called culture. Folk culture and traditions are those cultures which are kept alive by experience, srutis and heritage. Their basis is not books and books. If Indian society is seen as a whole, then prosperity, oral, traditions, communal harmony are included in one formula here. If seen with a deep insight, folk cultures and traditions are completely enshrined in rural India. It can be said that the culture of Indian society is multidimensional. Because India is the father of many religious systems such as Sanatan Dharma, Jainism, Buddhism and Sikhism, Sindhi religion is the father of all these religions. Various religions and traditions that originated in India from this mix have influenced all parts of the world. It reflects a shared culture and shared vision. This shared vision, values, customs, traditions shows the definite goal of Indian society. Culture and creativity are included in all economic, social and other activities of Indian society. India, a country of diversity, is known for its diverse cultures. There is a huge collection here in the fields of song-music, dance, drama-art, folk-traditions, performing arts, religious rites and rituals, painting and writing, which is known as the 'intangible cultural heritage' of humanity. Its protection and promotion is an urgent need.

मुख्य शब्दः लोककला, लोकनृत्य, लोकसंस्कृति, लोक परम्परा, सांस्कृतिक विरासत
Folk Art, Folk Dance, Folk Culture, Folk Tradition, Cultural Heritage.

प्रस्तावना

अभी कुछ दिनों पहले मैंने प्रसिद्ध लोकगायिका मालिनी अवस्थी को कजरी गाते हुए देखा-सुना। यह एक शानदार मंचीय प्रस्तुति थी। सच है भारत को जानने के लिए यहाँ की लोककला और संस्कृति को जानना आवश्यक है। यही लोककलायें ही हमारे देश को सम्पन्न बनाती हैं। भारत में हर एक प्रदेश का अपना रंग है और उसी रंग में रंगी वहाँ की लोककलाएँ हैं जो अपनी विविधता औरअस्मिता को व्यक्त करती हैं। हर प्रदेश का मौसम, भौगोलिक संपदा, फसलें, भाषायें, धार्मिक परम्परायें, रीति-रिवाज, त्यौहार, शादी-विवाह, जन्म-मरण सबकुछ लोक कला के माध्यम से लोक गीतों व लोक संगीत के माध्यम से व्यक्त होता है। अधिकतर लोकगीतों व लोकनृत्यों का संबंध हमारे

त्यौहारों, उत्सवों या फिर विशेष पर्वों से होता है। या फिर जैसा कि कहा जाता है कि भारत गाँवों का देश है तो यहाँ के उत्सव व हर्षोल्लास भी फसलों की कटाई व रोपाई से संबंधित होते हैं। भारत के हर प्रान्त में, हर गाँव की मिट्टी में लोकगीत, संगीत व नृत्य रचे बसे हैं। हर क्षेत्र की लोककला अपनी लय और ताल में भारत की पारम्परिक विरासत को संजोये हुए है। असम, सिक्किम, त्रिपुरा, झारखण्ड, छत्तीसगढ़ के लोकनृत्य अपने-अपने प्रान्तों की विरासत को सहेजे हुए है। ये सभी नृत्य फसल की कटाई के समय खुशहाली और उल्लास का प्रतीक है।
भारत के हर राज्य या हर क्षेत्र में किसी खास संस्कृति व धर्म से ज़ुड़ा उत्सव मनाया जाता है और हर उत्सव किसी न किसी जीवन मूल्य मानवता व जीवतंता से जुड़ा हुआ होता है। जैसे केरल में ओणम, तमिलनाडु में पोंगल, महाराष्ट्र में गणेश चतुर्थी, ओडिसा में जगन्नाथ रथयात्रा, बंगाल में दुर्गापूजा, पंजाब में बैशाखी आदि ऐसे उत्सव हैं जिनमें तमाम तरह की लोककलायें व संस्कृतियाँ निहित हैं। ये सभी उत्सव हमारे देश की अमूल्य धरोहर व विरासत हैं। उनका संरक्षण व संवर्धन प्रत्येक भारतवासी व सरकार का परम धर्म होना चाहिए।

भारत विश्व की प्राचीनतम गिनी जाने वाली सभ्यताओं में से एक है। हमारी एक समृद्ध व सम्पन्न सांस्कृतिक विरासत रही है जिसे अक्षुण्ण बनाये रखने व निरन्तर बनाये रखने के प्रयास सराहनीय है। अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में अपनी विभिन्न कलाओं के प्रचार में निरंतरता बनाये रखते हुए भारत सांस्कृतिक विरासत की सुरक्षा के लिए यूनेस्को की तरफ देख रहा है। पिछले वर्ष संस्कृति मंत्रालय ने 2024 के विजन के एक भाग के रूप में भारत की सांस्कृतिक विरासत की राष्ट्रीय सूची तैयार की थी। इसका उद्देश्य इसके माध्यम से भारत के विभिन्न राज्यों से विभिन्न अमूर्त सांस्कृतिक विरासतों के बारे में राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर जागरूकता बढ़ाना है जिससे उनकी सुरक्षा और संरक्षण सुनिश्चित किया जा सके। यह एक महत्वपूर्ण व आवश्यक तथ्य है कि संस्कृति को सबसे पहले उसके उत्पत्ति स्थल के पास संरक्षित किया जाये फिर उसके प्रति देश के अन्य भागों में जागरूकता उत्पन्न की जाये। ऐसा नहीं है कि आज पारम्परिक भारतीय लोक-संस्कृति पूरी तरह से उपेक्षित है। सरकारी विभागों ने अपनी क्षमता के अनुरूप लोक संस्कृति के साथ-साथ अन्य कलाओं को वैश्विक परिदृश्य में लाने का पूरा प्रयास किया है। लोककलाओं को प्रोत्साहन देने के लिए लागू की गयी योजनाओं और नीतिगत निर्णयों की संख्या में पिछले एक दशक में वृद्धि हुई है। संस्कृति मंत्रालय के माध्यम से भारत सरकार, भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध, परिषद के माध्यम से विदेश मंत्रालय, पर्यटन मंत्रालय व अल्पसंख्यक मामलों के मंत्रालय ने पारम्परिक लोककला और संस्कृति के प्रचार के लिए सक्रिय रूप से कदम उठाये हैं, प्रयास किये हैं। हमारे विदेश मंत्रालय द्वारा तीन सप्ताह का उन्मुखीकरण कार्यक्रम "भारत को जानिये" ने भारतीय संस्कृति और विरासत के साथ परिचित कराने के लिए युवा प्रवासियों के लिए एक उम्दा मंच तैयार किया है जिसका उद्देश्य अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पारम्परिक भारतीय संस्कृति का प्रदर्शन करना है। सन् 2015 से "एक भारत श्रेष्ठ भारत" अभियान के तहत कई राष्ट्रीय सांस्कृतिक महोत्सवों का आयोजन किया गया है। ऐसे आयोजन हमारे लिए उत्प्रेरक का काम करेंगे जो कि हमारी विरासत को संरक्षित करने के लिए आवश्यक है।

प्राचीन काल से भारतीय समाज में उत्सवधर्मिता रची बसी है। हमारा समाज शिशु के जन्म से लेकर विवाह आदि संस्कारों में गीतों और नृत्यों के माध्यम से स्वयं को अभिव्यक्त करता रहा है। सृष्टि के सृजन से लेकर संहार तक भारतीय लोग संगीत और गीत में सराबोर रहते हों। हमारे देश में नृत्य नाटिकायें, स्वांग, नौटंकी, रामलीला, पंडवानी गायकी व लोकनृत्य अपने आप में एक धरोहर है जिसमें विभिन्न पौराणिक कथायें आख्यान संरक्षित हैं। ये हमारी संस्कृति की आत्मा हैं। हमारा इतिहास भी ऐसे उदाहरणों से भरा है जहाँ राज्यों ने लोककलाओं के संरक्षण और संवर्धन में महती भूमिका निभायी है।

भारत एक ऐसा देश है जहाँ अलग-अलग प्रदेशों में अलग-अलग भाषायें, साहित्य, परम्परायें, लोककलायें हैं। यही विविधता ही हमारी सम्पन्नता है। इसी सम्पन्नता में ही हमारी अद्भुत, संपदा है। हमारे यहाँ की लोककलाओं से हमारी संस्कृति व सभ्यता परिलक्षित होती है क्योंकि लोककला किसी भी संस्कृति का दर्पण मानी जाती है और संस्कृति का उद्भव और विकास भी समाज के आम लोगों द्वारा ही होता है।

भारतीय संस्कृति में कला जीवन का अभिन्न अंग है। लगभग हर स्त्री पुरुष के भीतर एक कलाकार मौजूद है। प्रसिद्ध भारतविद् श्री कुमार स्वामी कहते हैं कि भारतीय ग्रामीण जीवन में अलग से कला, शिल्प, या संगीत, जैसा कुछ भी नहीं है। वो जीवन का अतरंग हिस्सा है। कभी यह कला तीज त्यौहारों में आँगन में अल्पना या रंगोली बनकर निखरती है। तो कभी धागों के माध्यम से कढ़ाई, बुनाई के रूप में ग्रामीण स्त्रियाँ ऐसे-ऐसे काम कर सकती है जिनमें उनके देशज ज्ञान, सूझबूझ, कल्पना और मेहनत झलकती है और इन कार्यों के द्वारा वे देश की आर्थिक उन्नति में अपनी सहभागिता दे सकती है। इस श्रेणी की कलाकारों में बिहार की 'मधुबनी' चित्रशैली सर्वोपरि है। लगभग 5000 साल पुराने इतिहास पर गर्व करने वाला हमारा देश रामायण, महाभारत व पौराणिक ग्रन्थों की कहानियों के माध्यम से लोगों तक अपनी बात पहुँचाता रहा है। इसका माध्यम गीत, संगीत, कलाकारी, नौटंकी, गायकी, चित्रकारी आदि होते रहे हैं। कहा जाता है कि कला अपने विभिन्न रूपों में अपनी विषय वस्तु, रूप,

शैली, सुन्दरता व प्रस्तुति के लिए सराही जाती है। सदियों से कला की विभिन्न विधायें कलाकार के गीत, नृत्य व संवाद में पिरोकर मनुष्य के अनुभवों को अभिव्यक्त करने का माध्यम रही है। यह सब एक साझा विरासत है।

लोक संस्कृति के संरक्षक प्रतिष्ठापक ग्रामीण लोग, परमहंस या अबोध बालक की भांति स्वयं अपने को कुछ भी नहीं समझते। भारतीय लोक संस्कृति की आत्मा भारतीय साधारण जनता है। जो नगरों से दूर गाँवों, वन प्रान्तों में निवास करती है। संस्कृति ब्रह्म की भाँति अवर्णनीय है। वह व्यापक है अनेक तत्वों का बोध कराने वाली है, जीवन की विविध प्रवृत्तियों से संबंधित है। अतः विविध अर्थों व भावों में उसका प्रयोग होता है। मानव मन की बाह्य प्रवृत्ति मूलक प्रेरणाओं से जो कुछ विकास हुआ है उसे सभ्यता कहेंगे और उसकी अन्तर्मुखी प्रवृत्तियों से जो कुछ बना है उसे संस्कृति कहेंगे। लोक का अभिप्राय सर्वसाधारण जनता से है जिसकी व्यक्तिगत पहचान न होकर सामूहिक पहचान होती है। विभिन्न समुदायों का मिला जुला रूप लोक कहलाता है और इन सबकी मिली जुली संस्कृति लोक संस्कृति कहलाती है। देखने में सबका रहन-सहन, व्यवहार, नृत्य, गीत, कला कौशल, भाषा आदि सब अलग-अलग दिखाई देते हैं। परन्तु एक ऐसा सूत्र है जो इन्हें बाँधे रखता हो। यही लोक संस्कृति है। लोक जीवन सरलतम, नैसर्गिक अनुभूतिमयी अभिव्यंजना का चित्रण लोक गीतों व लोक कथाओं में मिलता है। लोक साहित्य में लोक मानव का हृदय बोलता है। प्रकृति स्वयं गुनगुनाती है। लोक जीवन में पग-पग पर लोक संस्कृति के दर्शन होते हैं। लोक साहित्य उतना ही पुराना है जितना कि मानव इतिहास। इसलिए उसमें जन जीवन की प्रत्येक अवस्था, प्रत्येक वर्ग, प्रत्येक समय और प्रकृति सभी कुछ समाहित है। लोक संस्कृति वह संस्कृति है जो अनुभव श्रुति और परम्परा से चलती है। इसके ज्ञान का आधार किताबें नहीं होती। किसी क्षेत्र के निवासियों पर उनके प्रादेशिक पर्यावरण, सामाजिक रहन-सहन तथा संस्कृति का गहरा, प्रभाव होता है और ये सभी चीजें जीवन के कई पक्षों को प्रभावित करती हैं। उस क्षेत्र की सामान्य जनता जिन शब्दों में गाती हंसती, बोलती व उत्सव मनाती है। धीरे-धीरे यह सभी चीजें लोक संस्कृति व साहित्य का हिस्सा बन जाती है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी ने कहा था कि ऐसा मान लिया जा सकता है जो चीजें लोकचिŸा से सीधे उत्पन्न होकर सर्वसाधारण को आन्दोलित, चालित और प्रभावित करती हैं वे ही लोक साहित्य, लोक शिल्प, लोक संस्कृति, लोक कथानक, लोकनाट्य आदि नामों से पुकारी जा सकती हैं। लोकसंस्कृतियाँ, लोक परम्परायें मौखिक परम्परा द्वारा एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में हस्तान्तरित होने वाली कलायें हैं जो बहुत ही सहज, स्वतः और स्फूर्त होती हैं।

वर्तमान समय में लोग अपनी संस्कृति, सभ्यता व इतिहास को न जानते हैं न जानने का प्रयास करते है। अगर ऐसा ही रहा तो स्थानीय स्तर पर लोक संस्कृति व परम्परा लुप्त हो चुकी होंगी और आने वाले समय में हम अपनी स्थानीय, संस्कृति, भाषा व परम्पराओं के बारे में सिर्फ किताबों में पढ़ेंगे। कहा जाता है कि सभ्यता से मनुष्य के भौतिक क्षेत्र की प्रगति सूचित होती है जबकि संस्कृति से मानसिक क्षेत्र की प्रगति सूचित होती है। मनुष्य की जिज्ञासा का परिणाम धर्म और दर्शन होते हैं तथा सौन्दर्य की खोज करते हुए वह संगीत, साहित्य, मूर्तिकला, चित्रकला, वास्तु आदि अनेक कलाओं को उन्नत करता है। मनुष्य के मानसिक क्षेत्र में उन्नति की सूचक उसकी प्रत्येक सम्यक् कृति संस्कृति का अंग बनती है। इनमें प्रधान रूप से धर्म, दर्शन, सभी ज्ञान-विज्ञानों, कलाओं तथा सामाजिक व राजनैतिक संस्थाओं और प्रथाओं का समावेश होता है। विविधता में एकता के भाव स्थापित करती हमारी संस्कृति व परम्पराएँ हमारे अस्तित्व की असली परिचायक हैं। अतः इनकी सम्पन्नता और विविधता ही हमारी अमूल्य धरोहर है जो हमारा अपना है, अनुपम और शाश्वत है। उसका संरक्षण व संवर्धन एक महती आवश्यकता है।

अध्ययन का उद्देश्य

भारतीय संस्कृति व परंपरा के संरक्षण व संवर्धन हेतु लोगों को जागरूक करना।

लोकगीत, संगीत व रसानुभूति (एक मुख्य घटक)

लोकाभिरुचि के अनुसार प्रस्फुटित होने वाला संगीत ही देशी संगीत या लोक संगीत है। ऐसी कोई संस्कृति नहीं होगी जिसका अपना संगीत pi लोक गीत न हो। मानव मन की विविध भावनाओं के अभिव्यक्त स्वरूप को विद्वानों ने 'रस' की संज्ञा दी है। कहते हैं कि भावनाओं की अभिव्यक्ति ही ललित कलाओं की उत्पत्ति का कारण है। अतः रस सभी ललित कलाओं का मूल घटक तत्व है। एक ललित कला होने के नाते संगीत में तथा संगीत का ही एक प्रकार होने के नाते लोक गीत, संगीत में 'रस' निश्चित रूप से विद्यमान है। 'रस शास्त्र के अन्तर्गत कुल नौ रस माने जाते हैं। जिन्हें हम श्रृंगार, हास्य, करुण, रौद्र, वीर, 14pi - 145 वीभत्स, अद्भुत शांत vec q नाम से जानते हैं। लोक संगीत, गीत को उत्पत्ति vec 48 सहज रूप से रस को अभिव्यक्त करते हुए हुई है। अतः इसमें रस का निरुपण अत्यन्त सहज और सरल ढंग से हुआ है। लोक संगीत में रसाभिव्यक्ति भावों के काफी करीब होती है। उसमें भावनायें प्रायः उनके मूल रूप में अपने आप अभिव्यक्त हो जाती है। उन्हें अधिक परिष्कृत करके अभिव्यक्त नहीं किया जाता। लोक संगीत व गीत में रस का निरूपण प्रयत्नपूर्वक नहीं किया जाता overline 48 नैसर्गिक होता है। बिना किसी प्रयत्न का रस निरुपण संगीत को अत्यधिक पारदर्शी लोकलुभावन बना देता है। जिन्हें संगीत का ज्ञान बिल्कुल भी न हो ऐसे लोग भी लोकसंगीत सुनकर भावविभोर हो जाते हैं।

लोक गीत, पारम्परिक गीत, संगीत आदि सम्बन्ध में एक महत्वपूर्ण तथ्य यहभी है कि यह संगीत स्थानिक और प्रादेशिक होता है। अतः उसकी विषय वस्तु और उसमें अभिव्यक्त रस स्थानीय लोग तो आसानी से समझ लेते हैं और बाकी लोग संगीत की मधुरता का अनुभव कर सहज आनन्द लेते हैं।

निष्कर्ष

जब हम भारतीय संस्कृति व परम्पराओं की बात करते हैं उसका हिस्सा सभी धर्म, जाति, प्रान्त और समाज के लोग हैं। अतः संस्कृति को बचाना उन सभी लोगों की जिम्मेदारी है जो खुद को भारतीय मानते हैं। प्रकृति जब संगीतमय होकर गुनगुनाती है तब लोकगीतों का स्फुरण होना स्वाभाविक है। विभिन्न ऋतुओं के सहज प्रभाव से अनुप्राणिक लोकगीत, प्रकृति के रस से सराबोर हो जाते हैं। पावसी संवेदनाओं ने तो गीतों में जादुई प्रभाव भर दिया है। पावस ऋतु में गाये जाने वाले कजरी, झूला, हिंडोला व आल्हा आदि इसके प्रमाण है। सामाजिकता को जीवित रखने के लिए लोकगीतों / लोकसंस्कृतियों का सहेजा जाना बहुत आवश्यक है। लोकगीत व नृत्य किसी, काल, विशेष या कवि विशेष की रचनायें नहीं हैं। अधिकांश लोकगीतों के रचनाकारों के नाम अज्ञात है। एक ही गीत या कहानी कई कुंठो से होते हुए अपनी यात्रा पूर्ण करते हुए दिखता है। कहा जा सकता है कि लोकगीत, संगीत, परम्पराएँ, अत्यन्त प्राचीन एवं मानवीय संवेदनाओं के सहज उदगार हैं ये लेखनी द्वारा नहीं बल्कि लोक जिव्हा का सहारा लेकर जनमानस तक फैले हैं। लोकगीतों के कई प्रकार हैं। हमारे देश के कई भागों में रहने वाले आदिवासियों का संगीत बड़ा ही सजीव और ओजस्वी है। मध्य प्रदेश, दकन, छोटा नागपुर में गोंड-खांड, ओरॉव-मुंडा, भील संथाल आदि आदिवासी अपने साथ अपनी-अपनी संस्कृतियों को सहेज कर रखे हुए हैं। इसी प्रकार पहाड़ियों के अपने-2 गीत, संगीत है। उनकी अपनी अलग गतिविधियों में ढले संगीत की अपनी अलग सुन्दरता है। गढ़वाल, किन्नौर और कांगड़ा आदि के गीतों और गीत गाने को पहाड़ी गीत कहते हैं। वास्तविक लोकगीत देश के गाँवो में है। इनका सम्बन्ध गाँवों की जनता से है। चैता कजरी, बारहमासा, चौमासा, सावन आदि मिर्जापुर, बनारस और उत्तर प्रदेश के पूर्वी और बिहार के पश्चिमी जिलों में गाये जाते हैं। बाउल और भतियाली बंगाल के लोकगीत हैं। हीर-राँझा, सोहनी, महिवाल संबंधी गीत, पंजाबी लोकगीत है। इसी तरह राजस्थान के भी अपने अलग गीत संगीत हैं। इन लोकगीतों के उद्गम में कोरी कलपना न होकर रोजमर्रा के जीवन से जुड़ी चीजें होती हैं। इनकी भाषा बहुत ही सहज और आनन्ददायक होती है और मार्मिक होने के कारण ये जनसाधारण को अत्यधिक प्रभावित करते हैं। क्योंकि अपने हृदय के भावों को दर्शाने के लिए रचा गया सहज संगीत इच्छानुवर्ती होता है, जिसमें शिष्ट संगीत की तरह स्वरों के वादी, संवादी व अलंकार आदि नियम नहीं होते, उसमें राग नहीं होते, शास्त्रीय संगीत की तरह घरानों वाले जटिल नियमावली नहीं होती।

शहरीकरण, आधुनिकीकरण व औद्योगीकरण की वजह से हम दिन-प्रतिदिन लोककलाओं को भूलते जा रहे हैं। इन्हीं लोककलाओं में लोकसंगीत व नृत्य भी है। भारत के कई लोकसंगीत लुप्तप्रायः हो गए हैं या होने की कगार में है। एक बार लुप्त होने की दशा में उनका पुनः अस्तित्व में आना संभव नहीं है। अतः उनका संवर्धन व संरक्षण अति आवश्यक है। कई कला संस्थानों द्वारा लोक कला एवं उनके कलाकारों को सहायता दी जाती है। पर उसमें वृद्धि की जानी चाहिए। सरकार द्वारा भी कुछ सराहनीय कार्य इस दिशा में किए जाते vec epsilon 1 वर्तमान तकनीकि युग में हम ऑडियो, वीडयो, रिकार्डिंग के माध्यम से भी इस दुर्लभ संगीत को संरक्षित कर सकते संवर्धन हेतु लोकसंगीत व पारम्परिक संगीत का प्रशिक्षण होता रहे, यह आवश्यक है। पूर्व में लोक संगीत किसी भी संस्कृति का परिचायक हुआ करता था और उसी समाज व संस्कृति में उसका विकास होता था। परन्तु वर्तमान में ग्राम्य, संस्कृति नष्ट होती जा रही है और नगरों में मिश्रित संस्कृति विकसित होने की वजह से पारम्परिक लोकसंगीत लुप्त हो रहा है। वर्तमान समय में शास्त्रीय व सुगम संगीत के कई विद्यालय समाज में मौजूद हैं। इन विद्यालयों में यदि लोक संगीत भी सिखाया जाये तो उसका संरक्षण, संवर्धन व प्रचार-प्रसार भी होगा। शिक्षक कलाकार का जीवन निर्वाह आसानी से होगा और उसे अपनी पारम्परिक कला नहीं होड़नी पड़ेगी। सरकार तथा सामाजिक लोगों को जमीनी स्तर से कुछ कदम उठाने होंगे ताकि आने वाली पीढ़ियों को अपनी अमूल्य विरासत से परिचय हो सके।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *दिनेश्वर प्रसाद - लोक साहित्य और संस्कृति, लोकभारती प्रकाशन, दिल्ली।*
2. *हेमंत कुकरेती- भारत की लोक संस्कृति, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली।*
3. *डॉ० सरोज भार्गव- सौन्दर्यबोध एवं ललित कलाएँ।*
4. *लोकगीतों के सन्दर्भ और आयाम- शांति जैन।*
5. *ऋतुगीत, स्वर और स्वरूप- लेखिका श्रीमती शांति जैन।*
6. *शर्मा, डॉ० मनमोहन- "भारतीय संस्कृति और साहित्य चित्रगुप्त प्रकाशन, अजमेर, 1967।*